ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 80-82
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

महिला आत्मकथाओं में सामाजिक, आर्थिक समस्याए

डॉ0 अरुण कुमार मिश्र
वरिष्ठ सहायक आचार्य– हिंदी विभाग, एमडीपीजी कॉलेज प्रतापगढ़ (उ0प्र0), भारत

Received-16.10.2023, Revised-22.10.2023, Accepted-27.10.2023 E-mail: marun6471@gmail.com

सारांश: *समाज और अर्थ के क्षेत्र में सबसे ज्यादा स्थितियों और विडम्बनाओं में स्त्री ही जीती है। उसी को विविध प्रकार के झंझावातों को झेलना पड़ता है। इसी समस्याओं को लिपिबद्ध करती हैं– आत्मकथाकार। इनका मूल उद्देश्य अपनी स्थितियों परिस्थितियों को समाज एवं अर्थ के क्षेत्र में दिखाना होता है। प्रस्तुत लेख में उपर्युक्त समस्याओं का व्यापक चित्रण किया गया है।*

कुंजीभूत शब्द– झंझावात, आत्मकथात्मक, विश्लेषण, संश्लेषण, आत्मनिरीक्षण, सामाजिक, आर्थिक समस्याए, जीवनचर्या, हाहाकार।

सामान्य रूप से समस्याएं जीवन का अंग होती हैं। समस्याएं ही वह प्रेरक तत्व होती हैं जो व्यक्ति को उसका यथोचित मार्ग दिखाती हैं। संसार में जन्म लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति के पास कोई–न–कोई समस्या अवश्य होती है, लेकिन उन्हीं समस्याओं के बीच वह अपने जीने का रास्ता तलाश करता है। साहित्यकारों के लिए भी यही बात सत्य सिद्ध होती है, खासकर महिला साहित्यकारों में तो समस्याओं का अंबार दिखाई देता है। पग–पग पर उनके जीवन रथ के समक्ष समस्याओं का उन्नत हिमालय खड़ा दिखाई देता है, जो न केवल उनकी प्रगति को अवरुद्ध करता है, बल्कि उनके जीवन क्रम को भी छिन्न–भिन्न करके रख देता है। प्रायः सभी महिला आत्मकथाकारों ने अपने जीवन की गाड़ी के समक्ष उत्पन्न हुए अनेकों व्यवधानों का चित्रण किया है। किसी भी लेखिका का लेखन पथ उतना सपाट नहीं रहा, जितना की पाठक को लगता है। संघर्षों के ककरीले पथ को चीरते फाड़ते वह आगे निकलती चली जाती है और अपने अभीष्ट तक पहुँच जाती है। महिला साहित्यकारों की आत्मकथाओं को पढ़ने से ऐसा लगता है जैसे सारा जीवन ही संघर्ष में बीत गया हो। सुख के नाम पर तो महज औपचारिकता ही दृष्टिगत होती है। पितृसत्तात्मक समाज में पुरुषवादी मानसिकता के प्रभाव तले उनकी भावनाओं का कोई मोल नहीं रह गया। शायद उन्हीं भावनाओं के अंबार ने ही उन्हें लेखन के लिए प्रेरित किया। आत्मकथा तो व्यक्ति की स्वयं की भावनाओं का चित्रण ही नहीं, अपितु समस्त जीवनचर्या का जीता जागता दस्तावेज होता है। समस्या ही समाधान की जननी होती है इसलिए सभी ने अपने–अपने तरीके से अपनी समस्याओं का हल निकाला। प्रस्तुत विमर्श में हम महिला आत्मकथा कारो की आत्मकथाओं में चित्रित विभिन्न समस्याओं पर एक दृष्टिपात करने का प्रयास करेंगे जिनके कारण उन्हें जीवन में अनेकों संघर्षों का सामना करना पड़ा और उन्हीं संघर्षों के बीच से रास्ता निकालकर उन्होंने लेखन के क्षेत्र में अप्रतिम योग्यता प्रदर्शित की।

आर्थिक समस्या– प्रायः देखा गया है कि सभी समस्याओं की जड़ में आर्थिक समस्या ही रहती है। लगभग सभी चर्चित आत्मकथाकारो की आत्मकथाएं पढ़ कर यह ज्ञात होता है कि ऐसी कोई भी महिला आत्मकथाकर नहीं है जिसे अपने जीवन में आर्थिक समस्याओं का सामना न करना पड़ा हो। उनकी आत्मकथाओं में जगह–जगह पर आर्थिक विपन्नता तथा उसके द्वारा उत्पन्न समस्याओं का अंबार लगा हुआ है। आर्थिक विपन्नता जीवन क्रम को इस तरह से छिन्न–भिन्न करके रख देती है जैसे रेल की पटरी से नीचे उतरी हुई रेलगाड़ी। लेखिका मैत्रेयी पुष्पा द्वारा 'कस्तूरी कुंडल बसै' आत्मकथा में अंग्रेजों के द्वारा भयभीत ग्रामीणों की दशा वर्णित की गई है। गाँव में चारों और भुखमरी है और ऊपर से अंग्रेजों का कुर्की करने का हुक्म। लगान न चुका पाने पर ग्रामीणों की पिटाई कर दी जाती है। मैत्रेयी पुष्पा के शब्दों में– "गाँव में हाहाकार मच गया। माना की हाहाकार नया नहीं, मगर चोटें नए सिरे से पड़ती हैं। यातना देने के नए–नए ढंग गोरों ने खोज निकाले हैं, जैसे वह लगान लेने के बहाने आदमी को सजा देने में आनंद पाते हों कि उनके आतंक का साम्राज्य जमा रहे तो अंग्रेजी सत्ता को कौन उखाड़ सकता है? बस हुकूमत ने दंड देने के लिए गली–गली पिटाई खाने खोल दिए और ढोर डंगर, कपड़ों के साथ गृहस्थी के बर्तन, भाँड़े डाकुओं की तरह लूट लिए। आदमी की तह परते उधेड़ डाली मगर सोने चांदी का कील कांटा नहीं मिला।"[1]

लगान की कीमत अदा न कर पाने पर किसानों की बहू बेटियों की इज्जत आबरु लूट ली जाती थी। यह काम सिर्फ गोरे नहीं कर रहे थे, बल्कि उनके हिंदुस्तानी जमींदार और उनके कारिंदे भी उनकी इस काम में सहायता करते थे। अपने मालिकों को खुश करने के लिए किसानों की बहू बेटियों को उनके सामने परोस दिया जाता था। एक बार जमींदार से वसूली की मियाद बढ़वाने के लिए घर में आठ आने न होने के कारण कस्तूरी और उसकी माँ की इज्जत पर संकट खड़ा हो गया। माँ यह जानती थी कि अगर वसूली की मियाद नहीं बढ़वा पाई तो उसकी और उसकी बेटी की इज्जत लूटने में देर नहीं लगेगी। घर में कोई ऐसा सामान भी नहीं था जिसकी कीमत आठ आने के बराबर हो। जमींदारों के आने पर उसने कस्तूरी को अपनी तरफ खींच लिया और खुद आगे हो गई। लेखिका के शब्दों में– "अपने भाइयों की दुश्मन मानी जानेवाली परकाला कस्तूरी को जब माँ ने अपनी ओर खींचा और खुद आगे हो गई, तब उसका पत्थर कलेजा फूट पड़ा था। चुपचाप रोती जा रही थी। माँ जानती है– कारिन्दों के संग गोरे आ गए तो कारिन्दे उन्हें खुश करने के लिए औरतों को उनके आगे धकेलेंगे। बेटी बच जाए, माँ इसलिए आगे हो रही है। रक्त–मांस की बनी कस्तूरी के खून में ऐंठन पड़ने लगीं। माँ को कातर भाव से देखती हुई सोचने लगी– इस विपता में माँ–बेटी का रिश्ता खत्म होता जा रहा है, सो हम सखी–सहेली हो उठे! दो औरतों जैसे। तभी माँ कराहकर बोली– आज हमारी गाँठ में आठ आने होते तो जमींदार का नजराना ले जाते। बसूली की मियाद बढ़ जाती। इज्जत बचा लेते।"[2]

आर्थिक विपन्नता के कारण ही पिता पुत्री का सौदा कर देते हैं। 'कस्तूरी कुंडल बसे' नामक आत्मकथा में मैत्रैयी पुष्पा ने अपनी माँ कस्तूरी के बेचे जाने का जिक्र किया है। कस्तूरी एक ऐसी लड़की है जिसे विवाह की मंडी में रख दिया जाता है और उसका मोल

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

भाव किया जाता है। बचपन में ही साहूकार के कर्ज के डर से पिता घर छोड़कर भाग जाता है। जिस उम्र में सारे बच्चे स्कूल जाकर पढ़ाई लिखाई करते हैं उस उम्र में कस्तूरी को दिन–रात खेतों में काम करना पड़ता है, जिससे कि उसके परिवार का पेट पाला जा सके। जब फसल ठीक से नहीं उठती तो परिवार के सामने पेट पालने का संकट खड़ा हो जाता है और कस्तूरी गाय और बकरियों की तरह विवाह की मंडी में बेच दी जाती है। अनमेल विवाह होने के कारण डेढ़ वर्ष में ही कस्तूरी विधवा हो जाती है। इस तरह विधवा होने के संताप में निरंतर जलती रहती है। घर में पैसे की कमी होने के नाते कस्तूरी की माँ इसलिए उसका सौदा कर देती है, जिससे कि उसके बेटों की शादी की जा सके। लेखिका लिखती है– "बद्री बनिया ने मैली सी अठन्नी कस्तूरी की हथेली पर धरी तो उसकी आँखों के आगे सारा माहौल चकमक–चकमक करने लगा। यह चमकदार दिन अब तक के जीवन में कहाँ था ? न नीलामी हुई, न कुर्की पड़ी, बड़े और छोटे भाई घायल होने से बच गए, जिंदगी भी सलामत रही।"[3]

कस्तूरी जिस व्यक्ति को ब्याही गई थी वह उससे उम्र में कई वर्ष बड़ा था। वह कोई अमीर व्यक्ति भी नहीं था। उसने तो मुंबई जाकर सेठ साहूकारों की सेवा करके कुछ पैसे बचाकर अपने लिए चमकदार कपड़े खरीद लिए थे और पत्नी खरीदने के लिए कुछ पैसे बचा लिए थे। उन्हीं चमकदार कपड़ों के बल पर साहूकार ने उसे कुछ पैसे उधार में भी दे दिए थे। ससुराल से लौटकर कस्तूरी ने अपनी माँ को जो कुछ भी बताया वह सब कुछ माँ के लिए हैरान कर देने वाला था। लेखिका लिखती है– "चाची, जिसे धन्ना सेठ समझ रही है, उसका वह जँवाई गाँव से बम्बई न जाता और सेठों की सेवा करके साफ–सुथरे कपड़े न कमा लाता तो वह कस्तूरी का खरीदार कैसे बनता ? उजली पोशाक ने ही गाँव के साहूकार को भरमा लिया सो रकम उधार मिल गई। नहीं तो ब्याह की उम्र निकले पीछे उस मूँछोंवाले आदमी को अपनी बेटी कौन देता ? उम्र गई, औरत खरीदने की ताकत आ गई।"[4]

पूरे गाँव में भुखमरी का आलम था किसानों मजदूरों को अपना पेट भरना मुश्किल हो गया था, किन्तु जब कोई पर्व तथा त्यौहार आता तब वे उसे इस प्रकार से मनाते कि जैसे उनके सामने कोई समस्या ही न हो। ज्यादातर व्रत में उपवास रखने की परंपरा थी, जो लोगों की लाज रखने का बेहद आसान तरीका था। लेखिका के शब्दों में– "भुखमरी भभकी और भय के बावजूद गाँव का अपना करिश्मा अलग था, वह था पर्व त्योहारों के प्रति उत्साह और इंसानियत के प्रति आस्था। ज्यादातर त्योहारों में व्रत की अनिवार्यता होती है जो भुखमरी को मात देने का नायाब तरीका है।"[5]

विवाह के बाद भी कस्तूरी का दुर्भाग्य उसके साथ–साथ चलता है और डेढ़ वर्ष के अंतराल में ही उसके पति की मृत्यु हो जाती है। पति की मृत्यु के बाद कस्तूरी के ऊपर परिवार का बोझ आ पड़ता है। कस्तूरी रोने धोने के बदले संघर्ष के लिए तैयार दिखती है। बेसुरी आवाज में रोती हुई माँ को गीता का उपदेश समझाती है। हीरालाल की मृत्यु के बाद उसके पिता सारी जमीन जायदाद अपने नाम करवाने के लिए अदालतों का दरवाजा खटखटाते हैं, लेकिन अदालत पत्नी के जीवित रहते खेती तथा जमीन उसके नाम नहीं करती है। कस्तूरी को ससुर से यह उम्मीद बिल्कुल भी नहीं थी। इन सब के बावजूद कस्तूरी अपनी बेटी के साथ–साथ अपने ससुर का भी पालन पोषण करती है। घर में खाने के लिए आटा तक नहीं बचा है। बच्चें और ससुर दोनों भूखे हैं और कस्तूरी खुद भी भूखी है। लेखिका लिखती है– "कस्तूरी के सामने पिता समान पिता का चेहरा बदल गया। चोकर छान–छान कर यथाशक्ति आटा निकालती। बुजुर्ग का पेट भूखा नहीं रहने देती और खुद अपने पेट में घुटने देकर पड़ी रहती। तीन–चार दिन कभी आलू नसीब हुई तो दिन–दो दिन में शकरकंदी का टुकड़ा मिला तो पेट में डाल लिए। नहीं तो भूखे रहने की आदत ही पेट में पड़ी रही। अधपेट खाया और इस घर बार की खातिर माँ से भी नाता तोड़ लिया। यही था एक औरत की जिंदगी का मकसद? या यही कर्तव्य उसके हिस्से आया।"[6]

कस्तूरी एक साहसी महिला है वह संघर्षों से नहीं डरती। वह अपनी बेटी मैत्रेयी को पढ़ा लिखा कर उसे अपने पैरों पर खड़ा होने के योग्य बनाती है। यहाँ तक कि वह स्वयं उम्र बीतने के बाद भी पढ़ने लिखने के लिए घर से कुछ दूर विद्यालय जाती है और पढ़ लिखकर ग्राम सेविका का पद प्राप्त कर लेती है। अपनी पुत्री मैत्रेयी के लिए वह योग्य घर वर ढूँढ लेती है। उसका दामाद एक प्रतिष्ठित डॉक्टर है। इस प्रकार कस्तूरी आत्मनिर्भर बनकर अपने बचाए हुए पैसों से समाज की उपेक्षित तथा पीड़ित महिलाओं की भी सेवा करती है। इस प्रकार हम देखते हैं की मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी आत्मकथा 'कस्तूरी कुंडल बसै' में आर्थिक समस्याओं का उल्लेख किया है जिससे उसका पूरा का पूरा परिवार त्रस्त है।

मन्नू भंडारी द्वारा लिखी गई आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' में मन्नू के सामने सुरसा की भाँति मुँह बाए खड़ी आर्थिक समस्याओं का उल्लेख किया गया है, जिसमें मन्नू को अपने परिवार का पालन पोषण करने के लिए अथक परिश्रम करना पड़ा। उसके पति राजेंद्र एक प्रख्यात साहित्यकार होते हुए भी परिवार चलाने भर का पैसा नहीं कमा पाते थे। इसीलिए मन्नू को स्कूल से लेकर कॉलेज तक नौकरी करनी पड़ी। राजेंद्र दिल्ली में रहते थे जबकि मन्नू भंडारी कोलकाता में नौकरी कर रही थी। आर्थिक समस्या के कारण ही विवाह के बाद दोनों का एक जगह रह पाना संभव नहीं हो पा रहा था। इसके लिए ठोस आर्थिक पृष्ठभूमि की आवश्यकता थी। दोनों के एक साथ रहने के लिए आवश्यक था कि मन्नू या तो दिल्ली जाए अथवा राजेंद्र कोलकाता, लेकिन दिल्ली में तो राजेंद्र का कोई आर्थिक आधार भी नहीं था। आखिर किसके सहारे मन्नू दिल्ली जाती? कोलकाता में तो उसके पास एक अदद नौकरी भी थी जिसके आधार पर गृहस्थी की गाड़ी खींची जा सकती थी। लेखिका लिखती है– "चार महीने तक यही कशमकश चलती रही कि मैं दिल्ली जाऊं या राजेंद्र कोलकाता आएं, क्योंकि दिल्ली में तो राजेंद्र अपना कोई आर्थिक आधार तैयार नहीं कर सके.... कोलकाता में मेरे पास एक नौकरी तो थी जिससे खींच तानकर गृहस्थी की गाड़ी सरकायी जा सकती थी। बहुत ऐश आराम की चाहना मैंने कभी नहीं की, लेकिन मात्र रॉयल्टी की अनिश्चित आय के आधार पर दिल्ली जाने की हिम्मत भी मैं नहीं जुटा पा रही थी। मैं नहीं चाहती थी कि आर्थिक संकट जिंदगी की शुरुआत का सारा रंग रस ही निचोड़ ले। आखिर राजेंद्र ही कोलकाता आने को तैयार हुए और उनकी स्वीकृति मिलते ही मैंने मकान के लिए भाग दौड़ शुरू कर दी।"[7]

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

राजेंद्र ने मन्नू को समानांतर जीवन का सूत्र दिया था, किन्तु परिवार की आर्थिक जिम्मेदारी को निभाने में उन्हें कोई इंटरेस्ट नहीं था। प्रथम दृष्टया यदि देखा जाए तो विवाह दोनों ने ही किया था, लेकिन घर की सभी आर्थिक समस्याएं मन्नू को ही झेलनी पड़ती। राजेन्द्र के समानांतर जीवन का सूत्र केवल विचारों तक सीमित रह गया था। अपनी वैचारिकता को वह कभी भी व्यवहारिकता में परिवर्तित नहीं कर पाए। मन्नू भंडारी के शब्दों में– "अपनी अपनी जिंदगी का जो बटवारा हुआ उसमें घर की सारी जिम्मेदारियां और समस्याएं आर्थिक से लेकर दूसरी तरह की मेरे जिम्मे थी, जिसमें मुझे राजेंद्र की दिलचस्पी की ही नहीं सहयोग की भी जरूरत रहती थी। लेकिन उसे तो राजेंद्र ने मेरा अधिकार क्षेत्र घोषित कर रखा था।"[8]

कुछ दिनों बाद बेटी पैदा हो जाने के बाद तो लेखिका का दायित्व और भी बढ़ गया। अब तो बेटी के पालन पोषण का बोझ भी उन पर आ गया। उनकी आर्थिक हालत पहले से ही खराब थी जिसके कारण उनकी खुशी में भंग पड़ गया। वे लिखती है– "बच्ची के जन्म से बढ़ी जिम्मेदारियाँ ने, जिसका सारा बोझ भी मुझ पर आ पड़ा था, पहले बच्चे के जन्म की सारी खुशियों को ही सोख लिया।"[9]

इन सबके बावजूद भी वह लेखन के क्षेत्र में लगी रहीं। पारिवारिक समस्याओं को झेलते हुए लिखना वास्तव में कठिन कार्य था। अपने जीवन के उत्तरार्ध में जब उनकी लेखन प्रक्रिया थोड़ी धीमी पड़ने लगी तब उन्होंने इस बात को स्वीकार किया कि– "पहले हर स्तर पर संकट थे, कष्ट थे, समस्याएँ थी, नसों को चटका देने वाले आघात था पर उनके साथ लगातार लिखना भी था, जो भी जैसा भी। आज यह सारी समस्याएं, संकट समाप्तप्राय हैं पर लिखना तो बिल्कुल ही समाप्त है, तो क्या संघर्षपूर्ण और समस्याग्रस्त जीवन ही लिखने की अनिवार्य शर्त है?"[10]

राजेंद्र नौकरी करना अपनी शान के खिलाफ समझते थे इसलिए उन्होंने जीवन में लेखन के अलावा कोई नौकरी नहीं की। उन्हें इस बात से कोई चिंता नहीं रहती थी कि आखिर घर परिवार का खर्च कैसे चलेगा? अपने लेखन द्वारा वह सिर्फ अपने भर का खर्चा निकाल पाते थे। बेटी के जन्म पर भी उन्होंने कोई सहयोग नहीं किया था। आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण हंसी मजाक की चीज भी उन्हें चिड़चिड़ा बना देती। एक बार रेडियो में नौकरी का ऑफर आने पर राजेंद्र ने उसे ठुकरा दिया था। राजेंद्र ना तो खुद नौकरी करते थे और न ही उन्हें अपनी पत्नी का नौकरी करना पसंद था। उनके नौकरी न करने पर मन्नू लिखती है– "मुझे इनकी नौकरी न करने से न कोई शिकायत थी और न तकलीफ। तकलीफ थी तो केवल इस बात से कि जब आप नौकरी कर ही नहीं सकते–करना ही नहीं चाहते तो कम से कम मेरे नौकरी करने और घर चलाने पर इतनी–इतनी कुंठाएं पाल कर मेरा और अपना जीवन इतना असहज और तकलीफदेह मत बनाइये।"[11]

उपरोक्त तथ्य यह प्रमाणित करते हैं की एक कहानी यह भी आत्मकथा में आर्थिक समस्याओं की चर्चा की गई है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुंडल बसै रे, रे मन जाह, जहां तोहि भावे, पृष्ठ–14, पांचवा संस्करण–2021, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली)।
2. वही, पृष्ठ–15.
3. वही, पृष्ठ–16.
4. वही, पृष्ठ–19.
5. मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, रे मन जाह, जहाँ तोहि भावे, पृष्ठ–21, पांचवा संस्करण–2021, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. वही, पृष्ठ–27–28.
7. मन्नू भंडारी, एक कहानी यह भी, पृष्ठ–55, छठवाँ संस्करण–2019, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
8. मन्नू भंडारी, एक कहानी यह भी, संस्करण–2009, पृष्ठ–57, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. मन्नू भंडारी, एक कहानी यह भी, संस्करण–2009, पृष्ठ–65, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।
10. वही, पृष्ठ–13.
11. वही, पृष्ठ–67.

*****